BA. Sem. VI

Hindi Hons. DSE - III

Group A - सूरदास

(प्र०(1) कवि सूरदास का संक्षिप्त जीवन परिचय प्रस्तुत करें।

उत्तर- भक्तिकाल पर एक विहंगम दृष्टिपात करने के पश्चात हम निःसंदेह यह कह सकते हैं कि सगुण भक्ति काव्य धारा एवं श्रीकृष्ण भक्तिधारा के श्रेष्ठ कवि सूरदास जी ही हैं। सगुण भक्तिधारा के अंतर्गत, कृष्णाश्रयी शाखा के प्रतिनिधि कवि सूरदास का हिन्दी अथवा भारतीय भाषाओं के साहित्य में ही नहीं समूचे विश्व-साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। विशेष रूप से वात्सल्य तथा श्रृंगार के क्षेत्र में सूरदास का काव्य अद्वितीय है।

जैसा डॉ० श्यामसुन्दरदास का कहना है - "वल्लभाचार्य के शिष्यों में सर्वप्रथम, सूरसागर के रचयिता हिन्दी के अमर कवि महात्मा सूरदास हुए जिनकी सरस वाणी से देश के असंख्य सूखे हृदय हरे हो उठे और भग्नाशा जनता को जीने का नवीन उत्साह मिला।" वस्तुतः सूरदास भी भक्तिकाल की कृष्ण भक्ति-शाखा के जाज्वल्यमान रत्न हैं और डॉ० ब्रजेश्वर शर्मा के शब्दों में - "व्यावहारिक और सरस आदर्श की दृष्टि से सूर का काव्य अत्यंत श्रेष्ठ है। वे एक ऐसे कवि हैं जिनमें कवित्व, भक्तिभाव और जीवन-व्यापार सभी एकरस होकर घुल-मिल गये हैं। हम उन्हें अपना सबसे सच्चा और सबसे श्रेष्ठ कवि कह सकते हैं।"

बाह्यसाक्ष्य और अन्तःसाक्ष्यों का आधार लेकर सूर की जीवन झांकी इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है। चौरासी वैष्णवों की वार्ता के आधार पर

सूर को सारस्वत ब्राह्मण माना जाता है और इनके पिता का नाम रामदास था और ये देहली के पास सीही ग्राम में उत्पन्न हुए थे। यों सीही के अतिरिक्त गोपाचल, मथुरा का कोई ग्राम तथा रुनकता को भी इनका जन्म-स्थान कहा जाता है लेकिन अधिकांश विचारक सीही को ही इनका जन्म स्थान मानते हैं।

उनकी जन्म तिथि विक्रम संवत् 1535 (~~सन् 147~~ अर्थात् (सन् 1478 ई०) वैशाख शुक्ल पंचमी कही जाती है। कहा जाता है कि सूर तेरह वर्ष की आयु में ही घर से विरक्त होकर अपने गाँव से चार कोस दूर एक तालाब के तट पर पीपल के वृक्ष के नीचे रहने लगे और अठारह वर्ष तक वहीं रहे लेकिन बाद में वैराग्य भंग होने के भय से वहाँ अधिक समय तक न रह सके।

यह भी कहा जाता है कि अलौकिक प्रतिभा संपन्न थे तथा जन्मांध भी थे अर्थात् उनके चक्षु नाम मात्र को भी न थे। कहते हैं कि अठारह वर्ष की आयु में ही वह काफी प्रसिद्ध हो चुके थे और वैभव संपन्न भी हो गये थे लेकिन अपना समस्त धन माता-पिता को सौंप आगरा और मथुरा के बीच गऊघाट में रहने लगे। निपुण गायक होने के कारण उनके अनेक सेवक हो गए तथा बहुत के पश्चात् उनका वल्लभाचार्य से साक्षात्कार हुआ। जो भी हो, यह निश्चित है कि जब पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक महाप्रभु वल्लभाचार्य दक्षिण से उत्तर-भारत में मथुरा-वृंदावन की यात्रा पर आए तो उन्हें मथुरा और वृंदावन के बीच यमुना नदी के गऊघाट पर

एक दृष्टिहीन बालक बड़े करुण और मधुर स्वर में प्रभु भक्ति के भजन गाते हुए दिखाई दिया। उन्होंने ही उस बालक को सूरदास नाम दिया तथा अपना शिष्य बनाकर भगवान कृष्ण की मनोहर लीलाओं का गान करने की प्रेरणा दी। धीरे-धीरे सूरदास के पदों ने लोगों को इतना मुग्ध किया कि केवल ब्रज में ही नहीं, कृष्ण भक्ति के पदों की रचना और गायन की परंपरा समूचे भारत में प्रचलित हो गई।

यह कहा जाता है कि वल्लभाचार्य को इन्होंने पहले भक्ति सम्बन्धी कुछ पद सुनाए तो इन पदों से वह बहुत प्रभावित तो अवश्य हुए लेकिन उन्हें इनकी यह दैन्य भावना पसन्द नहीं आयी। तब उन्होंने उनसे कुछ भगवत-लीला संबंधी पद सुनाने को कहा। इसके पश्चात वल्लभाचार्य ने उन्हें पुष्टि-मार्ग में दीक्षित किया श्रीकृष्ण लीला से परिचित कराया और अपने साथ गोवर्धन पर श्रीनाथ जी के मंदिर ले जाकर उन्हें कीर्तन का मण्डान सौंपा। यहीं रहकर सूर ने कृष्ण की विविध लीला से संबंधित सहस्राधिक पद रचे और गाए। कालान्तर में वल्लभाचार्य के पुत्र विट्ठलनाथ ने अपने पिताजी के और चार अपने प्रमुख शिष्यों को ले आठ प्रमुख कवियों का कीर्तन मण्डल 'अष्टछाप' नाम से स्थापित किया तथा सूर को इनका सर्व प्रधान बनाया। इस प्रकार सूर अष्टछाप के सूर्य हैं। कतिपय ऐसी जनश्रुतियाँ

भी प्रचलित है कि तानसेन ने सूर की अकबर से भेंट कराई थी पर इस संबंध में प्रामाणिक तथ्यों का अभाव है।

यद्यपि सूरदास के गोलोकवास (मृत्यु) के संबंध में विभिन्न तिथियां मानी जाती हैं लेकिन जैसा कि डॉ० दीनदयाल गुप्त और डॉ० हरवंशलाल शर्मा ने उनका देहावसान वि० सं० 1610 (सन् 1553 ई०) लगभग माना है, वह उचित ही है। इस संबंध में एक कथा भी प्रचलित है कि अंत में समय निकट जान सूर पारसोली के चन्द्र सरोवर के निकट पहुँचे श्रीनाथ जी की ध्वजा के सामने दण्डवत कर लेट गए और उसी ही कीर्तन के समय विट्ठलनाथ जी को यह समाचार प्राप्त हुआ वे भी वहाँ पहुँचे। सूर उस समय कृष्ण लीला संबंधी एक पद गाने लगे और चतुर्भुजदास ने कहा कि आपने गुरु महाराज का यश वर्णन नहीं किया। वास्तव में सूर भगवान के यश को ही गुरु-यश मानते थे। गुरु विट्ठलनाथ जी से वार्तालाप के क्रम में सूर ने कहा-

" खंजन नैन रूप रस माते।
अति सै चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते
चलि-चलि निकट जात स्रवनन के उलटि-पलटि ताटंक फंदाते
सूरदास अंजन गुन अटके नतरु अबहिं उड़ि जाते।"

इतना कहकर सूर ने अपने प्राण छोड़ दिए। इस प्रकार कृष्ण भक्ति का सरल गायक अपनी इहलीला समाप्त कर गोलोकवासी हो गया।

—x—

SEM - VI - Paper - DSE - III
Group - A - सूरदास

(प्र० - २) सूर की काव्य विशेषताओं पर एक संक्षिप्त लेख लिखें
अथवा
'सूर - सूर तुलसी शशि' इस कथन पर अपने विचार दें।

उत्तर - सूर को सूर्य के समान जाज्वल्यमान उद्दीप्त, प्रभावान माना गया है, जबकि तुलसी को शांत - कलांत हृदयवाले को शीतल छाँह देने वाला चन्द्रमा! सूर और तुलसी दोनों ही भक्त कवि थे किन्तु परम्पराएं भिन्न थीं। सूर जहाँ कृष्ण काव्य परम्परा के दमकते सूर्य थे, वहीं तुलसी रामकाव्य परम्परा के सगुणवादी कवि जिनकी शीतल चाँदनी में मंत्रपान स्नान कर निर्मल स्वच्छ होते थे। दोनों की अलग - अलग परम्पराएं हैं, अलग - अलग आराध्य हैं; अतः भक्तिपक्ष को लेकर दोनों में तुलना की जा सकती है, परम्परा पक्ष को लेकर नहीं। सूर को सूर्य के समान मानना और तुलसी को चन्द्रमा के समान - तुलसी की अवमानना होगी। तुलसी के संबंध में हम अलग से विचार करेंगे, सर्वप्रथम सूर पर विचार करना समीचीन होगा।

सूरदास की कृतियों के कृतियों के संबंध में विद्वानों में कुछ मतभेद नहीं है और काशी में नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट, इतिहास - ग्रन्थ एवं पुस्तकालयों में सुरक्षित ग्रन्थों की नामावली के अनुसार सूर से सम्बद्ध निम्नांकित पच्चीस ग्रन्थ कहे जाते हैं -
1. - सूरसारावली (2) साहित्य लहरी

(3) सूर-सागर (4) भागवत भाषा (5) दशमि स्कंध भाषा (6) सूरसागर-सार (7) सारावलि (8) मानलीला (9) राधा रस केलि कौतूहल (10) गोवर्धनलीला (11) दानलीला (12) भंवर-गीत (भ्रमर-गीत) (13) नागलीला (14) ब्याहलो (15) प्राण प्यारी (16) दृष्टि कूट (17) सूर-शतक (18) सूर साठी (19) सूर पचीसी (20) सेवा फल (21) सूरदास के विनय आदि के स्फुट पद (22) हरिवंश टीका (संस्कृत) (23) एकादशी महात्म्य (24) नल-दमयन्ती (25) राम जन्म

इनमें से कुछ रचनाओं को कतिपय विद्वानों ने विवादास्पद माना है। इनमें से कई तो ऐसी कृतियाँ हैं जो सूर सागर का अंश हैं तथा और कुछ ऐसी हैं जो टेक ही के कारण सूरकृत मानी जाती हैं तथा कुछ की प्रमाणिकता तो विद्वानों ने सिद्ध कर दी हैं। द्वारकादास पारीख और प्रभुदयाल मीतल ने अपने सूर निर्णय में सूर की केवल इन रचनाओं को प्रमाणिक माना है सूर सारावली, साहित्य लहरी, सूरसागर, सूरसाठी, सूर पचीसी, सेवा फल और सूरदास के विनयादि के स्फुट पद। परन्तु डॉ० दीनदयाल गुप्त एवं अन्य कुछ आधुनिक समीक्षक सूर सारावली, साहित्य लहरी और सूर-सागर नामक केवल तीन कृतियों को ही सूरदास जी की रचना मानते हैं। यहाँ भी स्मरणीय है कि डा० ब्रजेश्वर वर्मा ने अपने शोध प्रबन्ध 'सूरदास' में साहित्य लहरी और सूरसारावली को भी सूरसागर के रचयिता सूर की रचना नहीं माना उन्होंने अपने प्रमाण प्रस्तुत कर

सूर सारावली और साहित्य लहरी को अप्रमाणिक कृति सिद्ध कर दिया है। अन्य रचनाओं को छोड़ भी दिया जाए तो भी 'सूरसागर' के आधार पर सूर को महाकवि मानने में किसी को कोई एतराज नहीं होनी चाहिए। सूरसागर वास्तव में एक विशाल सागर है जिसमें सूर ने अपनी भावनाओं के मुक्ता भर दिये हैं। निःसंदेह एकमात्र सूरसागर ही उनकी कीर्ति का प्रबल आधार है और सूर की सारी रचनाओं का यह समुच्चय वास्तव में एक विशाल सागर है जिसमें सूर ने अपने विचारों और अपनी भावनाओं के मोती भर दिये हैं। इसी सागर में जाकर सूरदास के सब चिन्तन और भावनायें गिरी हैं और इसी में उन्होंने शुद्धैतवादी दर्शन का सार और पुष्टिमार्गी भक्ति का निचोड़ भर दिया है। वात्सल्य में सख्य और कान्ता भक्ति तथा सेवा का सामंजस्य इस साहित्यसागर में एकत्र हुआ है वह कहीं अन्यत्र नहीं।

सामान्यतः सूर के पदों को निम्नांकित पाँच भागों में विभाजित किया जाता है - विनय के पद, बाललीला के पद, सौन्दर्य वर्णन सम्बन्धी पद, मुरली विषयक पद और भ्रमरगीत। इनमें से विनय के पद तो भक्ति-भावना से ही संबंधित हैं (जो बाललीला के पद भी कृष्ण-चरित से ही संबंधित माने जायेंगे पर सूर के बाल वर्णन का स्वतंत्र महत्व भी है। सच तो यह है कि सूर का बाल वर्णन विश्व साहित्य में अद्वितीय कहा जाता है और लाला भगवानदीन का यहां तक कहना है "सूरदास जी के साहित्य में यह अंश ऐसा है कि इसको निकाल देने से सूर का साहित्य लोप

हो जाता है, वैष्णव-भक्ति ही इनकी कविता की आत्मा है, इसके बिना इनका साहित्य आत्मविहीन शरीर के ही समान है।" सूर ने कृष्ण की बाल क्रीड़ाओं का वर्णन करते समय बाल कृष्ण की अनेक स्वाभाविक चेष्टाओं को अंकित की है तथा इसमें मातृहृदय की औत्सुक्य (उत्सुकता) का भी स्वाभाविक वर्णन किया है तथा इसमें कोई संदेह नहीं कि सूर मातृहृदय का चित्रण करने में पूर्ण सफल रहे हैं और डॉ० मुंशीराम शर्मा के शब्दों में "बालगोपाल की आंतरिक मनोदशाओं के सफल चित्रण के साथ उन्होंने मातृहृदय की बड़ी गहरी अनुभूति प्रकट की है।"

यद्यपि प्रसंगानुसार सूर-सागर में नौ रसों के उदाहरण भी मिलते हैं लेकिन सूर ने शृंगार और वात्सल्य रस को ही प्रधान रूप से अभिव्यक्ति की है। आचार्य शुक्ल ने कहा भी है- "वात्सल्य और शृंगार के क्षेत्रों का जितना अधिक उद्घाटन सूर ने अपनी बन्द आँखों से किया, उतना किसी अन्य कवि ने नहीं। इन क्षेत्रों का कोना-कोना वे झाँक आए। उक्त दोनों के प्रवर्तक रति भाव के भीतर की जितनी मानसिक वृत्तियों और दशाओं का अनुभव प्रत्यक्षीकरण सूर कर सके, उतनी और कोई नहीं। हिन्दी साहित्य में शृंगार का रस-राजत्व यदि किसी ने पूर्ण रूप से दिखाया है तो सूर ने।"

सूरसागर संयोग शृंगार का अत्यंत व्यापक वर्णन दृष्टिगोचर होता है तथा कवि ने शृंगार-सम्बन्धी जितने भी क्रीड़ा-विधान हो सकते थे उन सभी का वर्णन किया है और संयोग शृंगार की भाँति विप्रलंभ (वियोग) शृंगार में भी व्यापकता एवं गंभीरता दिखाई पड़ती है।

तथा कवि ने विरह की सभी अन्तर्दशाओं का चित्रण भी किया है। भ्रमरगीत पदावली में तो विरह सागर उमड़ सा उठा है तथा उसमें कल्पना एवं भावुकता का सहज सामंजस्य दृष्टिगोचर होता है।

इस प्रकार सूर की रस व्यंजना अनुपम है और वे रूप चित्रण तथा प्रकृति चित्रण में सफल रहे हैं। सूरसागर में श्रीकृष्ण के शैशव से लेकर किशोर अवस्था तक के असंख्य रूप चित्रित हैं जिनमें कवि की भावना, कल्पना, कला कुशलता और शैली की चमत्कारिता एक साथ व्यक्त हुई हैं। इस प्रकार सूर ने कृष्ण का चरित्र विविध दृष्टियों से अंकित किया है और इसमें सफलता भी प्राप्त हुई है। साथ ही सूर की राधा भी हिन्दी-साहित्य को प्राप्त एक अमूल्य देन है और यह चंडीदास की राधा की तरह न तो परकीया ही और न विद्यापति की राधा की भाँति प्रेयसी ही है। साथ ही वह एक साधारण या असाधारण गोपी भी नहीं बल्कि कृष्ण की पत्नी सदृश ही है और उसे सूर की अपनी देन ही समझनी चाहिए।

वस्तुतः सूरदास ही प्रथम कवि हैं जिन्होंने ब्रजभाषा को साहित्यिक रूप प्रदान किया। सूर ने संस्कृत के तत्सम शब्दों को भी अपनाया है और तद्भव तथा ठेठ शब्दों के साथ-साथ विदेशी शब्दों को भी निःसंकोच ग्रहण किया है। हरिऔध जी के अनुसार - "उनके हाथों से यह भाषा जैसी मंजी जितनी मनोहर बनी और जितनी सरसता को उसने प्राप्त किया वह हिन्दी संसार के लिए गौरव की वस्तु है।

इस प्रकार सूर के काव्य के विविध पक्षों पर विचार करने के उपरान्त हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सूरदास जी हिन्दी साहित्य के अमर कवि हैं तथा सूर की कविता, कविता नहीं हृदय की झंकार है।

—— x —— x ——

BA - Sem - VI

Hindi Hons - DSE - III

Group-A सूरदास

(प्र० - 3) सूरदास की भक्ति - भावना पर संक्षिप्त में विचार दें।

उत्तर - भक्त प्रवर सूरदास भक्तिकाल की सगुणधारा के कृष्ण भक्त कवि हैं। वे वल्लभाचार्य के शिष्य थे तथा अष्टछाप के कवियों में सर्वप्रमुख थे। भक्ति के क्षेत्र में वल्लभाचार्य का साधना मार्ग 'पुष्टि-मार्ग' के नाम से जाना जाता है। वल्लभाचार्य के पुष्टिमार्ग में दीक्षित होने से पहले सूरदास एक संत थे जो सभी उपासना पद्धतियों, भक्ति प्रणालियों को समान भाव से देखते थे। पुष्टि मार्ग में आने से पूर्व किसी विशेष भक्ति संप्रदाय का प्रभाव न था। उनमें ईश्वर भक्ति के प्रति अनन्यता दिखाई देती है :-

मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै।
जैसे उड़ि जहाज को पंछी पुनि जहाज पै आवै॥

इसी प्रकार आत्म निवेदन की प्रवृत्ति भी उनके काव्य में उपलब्ध होती है - "प्रभु जी मोरे अवगुन चित न धरौ,
इक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परौ,
पारस भेदभाव नहिं मानत कंचन करत खरौ॥"

इष्टदेव में दृढ़ विश्वास, उसका गुणगान, सर्वस्व अर्पण की भावना, दैन्य निरूपण भी सूर के काव्य में विस्तार से उपलब्ध होता है। उनके प्रारंभिक पद विनय, वैराग्य आंतरिक साधना, गुरु का महत्व, आदि से संबंधित हैं किन्तु पुष्टिमार्ग में दीक्षित होने के उपरान्त जो पद उन्होंने रचे वे प्रेमलक्षणा भक्ति से सम्बन्धित हैं। भगवत्कृपा से ही भक्त के हृदय में भगवान के प्रति प्रेमलक्षणा भक्ति जागृत होती है। पुष्टिमार्ग में तीन प्रकार के जीव माने गए हैं -

1. पुष्टि जीव - जो भगवान के अनुग्रह पर विश्वास करते हैं और उनकी नित्यलीला में प्रवेश पाते हैं।
2. मर्यादा जीव - जो वेद विहित मार्ग का अनुसरण कर स्वर्ग प्राप्त करते हैं।

(3) प्रवाह जीव - जो संसार के प्रवाह में पड़कर सांसारिक सुखों में लीन रहते हैं। इन तीनों में पुष्टि जीव ही सर्वोपरि है। ईश्वर पर पूर्णतः निर्भर जीव ही उसके अनुग्रह का अधिकारी बनता है और अंत में नित्यलीला में सम्मिलित होता है। गोपियों की प्रेमा भक्ति को पुष्टिमार्गीय भक्ति का सर्वोत्तम उदाहरण माना गया है।

महात्मा सूरदास ने अपना सर्वस्व कृष्ण के चरणों में अर्पित कर पुष्टिमार्ग को अपनाया था। भगवान श्रीकृष्ण परब्रह्म हैं और दिव्य गुण संपन्न पुरुषोत्तम हैं। वे कृष्ण स्वयं प्रेममय हैं उन्होंने प्रेम के वशीभूत होकर ही अवतार लिया है। सूर ने प्रेम की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए भक्त की विकलता, अभिलाषा एवं विवशता का सुन्दर चित्रण किया है।

सूरदास की भक्ति सख्य भाव की है जिसमें भगवान के साथ भक्त का सखा भाव रहता है। ग्वाल-बालों का भी श्रीकृष्ण के प्रति सखा भाव ही है। यथा :-

खेलत में को काको गुसैंया।
हरि हारे जीते श्रीदामा बरबस ही कत करत रिसैंया॥

सूरदास ने पुष्टिमार्गीय सेवा भाव को अपनाते हुए भक्ति के तीनों रूप - गुरु सेवा, सन्त सेवा तथा प्रभु सेवा - को अपनी भक्ति भावना में स्थान दिया है। पुष्टिमार्ग में नित्य सेवा विधि एवं वार्षिकोत्सव सेवा विधि का विशेष महत्व है। सूर ने प्रातः काल से लेकर शयनपर्यन्त भगवान की सेवा विधि का वर्णन अपने काव्य में किया तथा वार्षिकोत्सव सेवा विधि के अंतर्गत उन्होंने विभिन्न अवतारों का पूरा-पूरा वर्णन किया है।

पुष्टिमार्ग में तीन आसक्तियाँ बताई गई हैं - (1) रूपासक्ति (2) लीलासक्ति (3) भावासक्ति। सूरदास ने लीलासक्ति को अपनाते हुए भगवान कृष्ण की विभिन्न लीलाओं का गान अपने पदों में किया है। सूरदास के गुरु वल्लभाचार्य

जी ने उन्हें कृष्ण के लीला पदों का गान करने का ही निर्देश दिया था इसलिए सूर ने भक्ति विभोर होकर गोकुल से लेकर मथुरा तक की समस्त कृष्णलीलाओं को अपने पदों का विषय बनाया है।

सूरदास ने सख्य भाव की भक्ति को अपनाते हुए भी कृष्ण के प्रति नन्द-यशोदा के वात्सल्य भाव की तथा राधा एवं गोपियों के दाम्पत्य एवं माधुर्य भाव की सुन्दर व्यंजना की है। गोपी लीला के अन्तर्गत कृष्ण एवं गोपियों के जिस प्रेम का चित्रण सूरदास ने किया है उसमें उनकी भक्ति-भावना पराकाष्ठा पर पहुँची दिखाई पड़ती है।

सूर की भक्ति पद्धति का मेरुदण्ड पुष्टिमार्ग ही है। भगवान का अनुग्रह ही भक्त का कल्याण करके उसे इस लोक से मुक्त करने में सफल होता है :-

जापर दीनानाथ ढरै।
सोइ कुलीन बड़ो सुन्दर सोइ जा पर कृपा करै।
सूर पतित तरि जाय तनक में जो प्रभु नेकु ढरै।।

नारद भक्ति सूत्र में आसक्तियों के एकादश रूप बताए गए हैं जिनमें से सूर का मन सख्यासक्ति, वात्सल्यासक्ति, रूपासक्ति, कान्तासक्ति और तन्मयासक्ति में अधिक रमा है। कृष्ण गोपियों के हृदय में ऐसे गड़ गए हैं कि अब वे किसी तरह निकलते ही नहीं गोपियों की इसी तन्मयासक्ति का वर्णन इस पद में है -

उर में माखन चोर गड़े।
अब कैसेहु निकसत नहिं ऊधौ तिरछे ह्वै जु अड़े।।

भक्ति के दार्शनिक स्वरूप का ध्यान रखते हुए सूरदास ने वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैतवाद की मान्यताओं को ग्रहण किया है। जीव को ब्रह्म का अंश मानते हुए वे उन दोनों का अद्वैत सम्बन्ध स्वीकार करते हैं। जीव की दुरवस्था माया के कारण होती है। यदि माया का प्रपंच न हो तो जीव शुद्ध

एवं अधिकारी है। माया के कारण ही जीव जगत के प्रपंच में फंसता है, इसलिए सूर कृष्ण से जो मायापति हैं, इस माया का निवारण करने की अनुरोध करते हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर सूरदास की ~~प्रेरक~~ भक्ति पद्धति से संबंधित निम्नलिखित निष्कर्ष हमारे ~~समक्ष~~ सम्मुख आते हैं :-

(1) सूर उच्च कोटि के भक्त हैं। उनकी भक्ति अन्त:करण की प्रेरणा और हृदय की अनुभूति थी। वह उनकी रग-रग में समाई हुई थी। भक्ति के बिना जीवन व्यर्थ है।

(2) सूरदास ने पुष्टिमार्ग में दीक्षित होकर जिस भक्ति-पद्धति का अनुसरण किया वह वैष्णव सम्प्रदाय में सख्य कोटि की अनन्य भक्ति कही जाती है। पुष्टि मार्गीय भक्ति के दार्शनिक प्रपंच को दूर रखकर उन्होंने उसे काव्य की भाव भूमि पर प्रेषणीय बना दिया।

(3) सूरदास ने नवधा भक्ति के सभी रूपों का वर्णन किया है परन्तु प्रमुख रूप से सख्य भक्ति, वात्सल्य भक्ति और मधुरा भक्ति को ही पल्लवित करने वाले पद लिखे हैं।

(4) अन्त: साक्ष्य और बाह्य साक्ष्य से स्वत: सिद्ध हो जाता है कि सूरदास ने अपने गुरु वल्लभाचार्य जी के वचनों का अनुसरण करके उनकी भक्ति भावना को स्पष्ट करने के लिए अधिकांश पदों की रचना की।

अंतत: हम कह सकते हैं कि सूरदास की भक्ति रागानुगा भक्ति है जिसमें कर्मकाण्ड का स्थान नहीं है। उनकी भक्ति भावना में सिद्धान्त पक्ष की अपेक्षा माधुर्य भाव की प्रबलता है, इसलिए वह भक्तों को अधिक प्रिय है।

— x —

BA- SEM- VI.
Hindi Hons.- Paper. DSE -III
Group(A) - सूरदास

(प्र०-4) सूरदास के वात्सल्य वर्णन की विशेषताएँ लिखें।

उत्तर - सूरदास का वात्सल्य वर्णन हिन्दी साहित्य की अनुपम निधि है। श्रीकृष्ण के बाल-सौंदर्य की झांकी के साथ-साथ बाल मनोविज्ञान का जैसा चित्रण सूरकाव्य में उपलब्ध होता है, वैसा अन्यत्र नहीं मिलता। बालक की चेष्टाएं, माता के हृदय की आशंकाएं, पुत्र के प्रति वात्सल्य भाव, बाल-वृत्तियों का निरूपण, मातृ हृदय की झाँकी, आदि का मर्मस्पर्शी एवं मनोहारी चित्रण सूरदास ने किया है। उनकी इस विशेषता को लक्ष्य कर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है - "बाल सौन्दर्य एवं स्वभाव के चित्रण में जितनी सफलता सूर को मिली है, उतनी अन्य किसी को नहीं। वे अपनी बंद आँखों से वात्सल्य का कोना-कोना झांक आए हैं।"

सूर के वात्सल्य वर्णन में स्वाभाविकता, विविधता, रमणीयता एवं मार्मिकता है जिसके कारण वे वर्णन अत्यंत हृदयग्राही एवं मर्मस्पर्शी बन पड़े हैं। यशोदा के बहाने सूरदास ने मातृहृदय का ऐसा स्वाभाविक, सरल और हृदयग्राही चित्र खींचा है कि आश्चर्य होता है। वात्सल्य के दोनों पक्षों - संयोग एवं वियोग का चित्रण सूरकाव्य में उपलब्ध होता है। वात्सल्य के संयोग पक्ष में उन्होंने एक ओर तो बालक कृष्ण की रूप माधुरी का चित्रण किया है तो दूसरी ओर बालोचित चेष्टाओं का मनोहारी वर्णन किया है। यथा :-

हरिजू की बाल छवि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव कोटि मनोज सोभा हरनि।

कृष्ण कहीं घुटनों के बल चल रहे हैं तो कहीं मुख पर दधि का लेप कर दौड़ रहे हैं। कहीं अपने प्रतिबिम्ब को पकड़ने की चेष्टा कर रहे हैं, तो कहीं किलकारी मार

रहे हैं एक चित्र प्रस्तुत है —

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटरुन चलत रेनु तन मंडित मुख दधि लेप किए।

सूर ने बाल कृष्ण की लीलाओं का चित्ताकर्षक एवं अत्यंत मनोहारी चित्र अंकित करने में जैसी सफलता प्राप्त की है वैसी किसी को नहीं मिल सकी है —

किलकत कान्हा घुटरुवनि आवत।
मनिमय कनक नन्द के आंगन बिम्ब पकरिबे धावत ॥

सूरदास ने बालकों के हृदयस्थ मनोभावों का चित्रण भी बड़े मनोयोग से किया है, बालकों की स्वाभाविक, पारंपरिक प्रतिस्पर्द्धा, बुद्धि चातुर्य, अपराध को छिपाने की प्रवृति, भोले-भाले तर्क आदि का विशद् चित्रण सूर काव्य में मिलता है। माता यशोदा उन्हें दूध पीने के लिए मनाती हुई यह लालच देती है कि दूध पीने पर तुम्हारी चोटी बढ़ जाएगी। कृष्ण उनकी बात मानकर एक हाथ से चोटी पकड़कर और दूसरे हाथ से दूध का गिलास पकड़कर माता यशोदा से पूछते हैं —

" मैया कबहुं बढ़ैगी चोटी ?
किती बार मोहि दूध पिवत भइ यह अजहूं है छोटी ॥

बालक कृष्ण माखन चोरी करते हुए रंगे हाथों पकड़े गए हैं, मुख पर माखन लगा हुआ है फिर भी तर्क देकर माता के सामने अपनी निर्दोषता प्रमाणित करते हुए कहते हैं —

" मैया मोरि मैंनहिं माखन खायो।
ख्याल परे ये सखा सबै मिलि मेरे मुख लपटायो।"

सूरदास ने बाल आक्रोश का भी चित्रण सुन्दर ढंग किया है।

बलराऊ कृष्ण को चिढ़ाते हैं कि तू यशोदा का पुत्र नहीं है तुझे तो मोल लिया गया है। कृष्ण खीझ जाते हैं और अपने आक्रोश की अभिव्यक्ति इन शब्दों में माता यशोदा से करते हैं :-

मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायो।
मोसों कहत मोल को लीन्हों तू जसुमति कब जायो।

माता यशोदा को अपने पुत्र का बड़ा ध्यान रहता है। बच्चों की जिद् बेतुकी होती है, कृष्ण ने हठ पकड़ ली है कि मैं तो चन्द्र खिलौना लूँगा। अब मैया यशोदा क्या करे? वह जैसे-तैसे उन्हें बहलाती हैं पर बात नहीं बन पाती। सूरदास ने इसका वर्णन निम्न पंक्तियों में किया है-

मैया मैं तो चन्द खिलौना लैहों।
जैहों लोटि अबै धरनी पै तेरी गोद न ऐहौं।

माता उन्हें समझाती हैं, पानी में चन्द्र का प्रतिबिम्ब दिखाती हैं पर वे नहीं मानते तब माता यशोदा कहती हैं कि मैं तेरे लिए चाँद सी बहू लाऊँगी तो कृष्ण कहते हैं - ठीक है मैं अभी विवाह करने जाऊँगा लो अब दूसरी समस्या आ खड़ी हुई। ये सभी वर्णन इतने स्वाभाविक हैं कि पाठक का हृदय इन्हें पढ़ते ही रसमग्न हो जाता है।

सूरदास ने जितनी तन्मयता से वात्सल्य के संयोग पक्ष का वर्णन किया है उतनी ही तन्मयता से वात्सल्य के वियोग पक्ष का चित्रण भी किया है। श्रीकृष्ण के मथुरा के लिए प्रस्थान करते समय यशोदा कितनी विकल है इसका चित्र इन पंक्तियों में देखा जा सकता है :-

यशोदा बार-बार यों भाखैं।
है कोई ब्रज में हितू हमारौ चलत गोपालहिं राखैं।

कृष्ण के मथुरा चले जाने पर माता का वात्सल्यपूर्ण हृदय अपने पुत्र के लिए विकल होने लगता है। उन्हें लगता है कि कृष्ण की आदतों से वे जितनी परिचित थीं उतना कोई उसे नहीं जानता। अतः देवकी को सन्देश भेजती हुई कहती हैं -

संदेश देवकी सों कहियो
हौं तो धाय तिहारे सुत की कृपा करति ही रहियौं।
जदपि टेव तुम जानति है हौं तऊ मोहि कहि आवै।
प्रात होत मेरे लाल लड़ैते माखन रोटी भावै।

उक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि सूरदास का वात्सल्य वर्णन अत्यंत हृदयस्पर्शी, मार्मिक एवं स्वाभाविक है। वात्सल्य का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसका वर्णन सूरदास ने न किया हो। उनके वात्सल्य वर्णन में तन्मयता, स्वाभाविकता, मनोवैज्ञानिकता एवं सहजता है। उन्होंने केवल बाल लीला का ही चित्रण नहीं किया अपितु बालकों की मानसिक प्रवृत्ति का भी हृदयग्राही वर्णन मनोविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में किया है। अतः यह कहना तर्कसंगत होगा कि सूर के वात्सल्य वर्णन में मनोवैज्ञानिकता का पुट है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सूरदास के वात्सल्य वर्णन की प्रशंसा करते हुए लिखा है :- "आगे होने वाले कवियों की श्रृंगार और वात्सल्य की उक्तियां सूर की जूठी सी जान पड़ती हैं।" निश्चय ही सूरदास वात्सल्य के सम्राट हैं और उनका वात्सल्य वर्णन हिन्दी साहित्य की ऐसी अपूर्व निधि है, जिसपर हम गर्व कर सकते हैं।"

— x ——— x ———— x —